www.thearyasamaj.org

आर.एन.आई. रजि० नं० HRHIN/2003/10425 सृष्टि संवत् 1960853117
डाक पंजीकरण संख्या : RTK/10/2014-16 विक्रम संवत् 2073
दयानन्दाब्द 193

सेवा में,

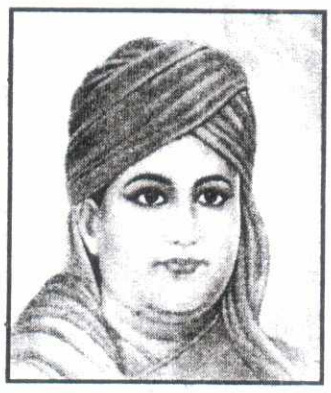

महर्षि दयानन्द सरस्वती

आर्य प्रतिनिधि

E-mail : aryapsharyana@yahoo.in
Website : www.apsharyana.org

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा का साप्ताहिक मुखपत्र दूरभाष : 01262-216222, Mob. 8901387993

विदेश में वार्षिक शुल्क : 75 डॉलर विदेश में आजीवन शुल्क : 300 डॉलर सम्पादक : मा० रामपाल आर्य

वर्ष : 13 अंक : 24 रोहतक, 21 नवम्बर, 2016 वार्षिक शुल्क : 150/- आजीवन 1500/-

क्या हमारे लिए दूसरा व्यक्ति अग्निहोत्र आदि कर सकता है?

❑ स्वामी मुक्तानन्द परिव्राजक

वैदिक संस्कृति में पंचमहायज्ञ का महत्त्व अतिविशेष है। एक प्रकार जो इन पंचमहायज्ञों का नित्य अनुष्ठान करता है तथा निमित्त आने पर यथाकाल 16 संस्कारों का अनुष्ठान करता है, वह आर्य कहलाता है। इस में जो स्वयं इन पंच यज्ञों का स्वगृह में अनुष्ठान करते हैं, वे बहुत ही प्रशंसनीय हैं, धन्यवाद के पात्र हैं। पंच महायज्ञों में प्रथम ब्रह्मयज्ञ जिसमें स्वाध्याय व ईश्वर उपासना दो हैं। ये दोनों ही कार्य व्यक्ति को स्वयं को अपने लिए करने पड़ते हैं। कोई दूसरा हमारे लिए जप-ध्यान-योगाभ्यास-स्तुति-प्रार्थनोपासना नहीं कर सकता है। वैसे ही स्वाध्याय (=मोक्ष शास्त्रों का अध्ययन) हमारे लिए दूसरा नहीं कर सकता है। क्यों? ये कार्य केवल मन के अधीन हैं, बाह्य साधनों से ये कार्य सम्पादित नहीं होते इसलिए दूसरा हमारे लिए नहीं कर सकता है। [इस में प्रमाण-**शुक्ला तपः-स्वाध्यायध्यानवताम्। सा हि केवले मनस्यायतत्त्वाद् बहिः साधना-नधीना न परान् पीडयित्वा भवति।** यो.द. व्यासभाष्य 4.7]

अन्य चार महायज्ञ बहिःसाधना-धीन है, केवल मन में नहीं होते हैं, मन के साथ-साथ बाह्य साधन वाणी, शरीर व भौतिक द्रव्यों से सम्पादन किये जाते हैं। मन में श्रद्धा व भावना होती है तथा शरीर से द्रव्यों को लेकर कुछ क्रियायें सम्पादित की जाती हैं। जो प्रथम भाग श्रद्धा व भावना है, उसे स्वयं को सम्पादित करना पड़ता है। दूसरा भाग शरीर से द्रव्य होम करना भी स्वयं करना बहुत अच्छा है। इसके विषय में नहीं कहना चाहिए कि स्वयं क्यों इतना परिश्रम करते हो, दूसरों से करवाओ और ऐसा कोई आचार्य कहता भी नहीं है।

अब प्रश्न उठता है जो स्वयं करने में असमर्थ हैं—

किसी भी कारण से समय अभाव, छोटा घर, स्थान अभाव, दूसरों का विरोध, स्वास्थ्य की प्रतिकूलता अथवा अन्य किसी भी कारण से जो स्वयं नहीं कर पाते हैं, तो क्या दूसरा करे अर्थात् हम धन दान देकर दूसरों से अग्निहोत्र आदि करवाएं तो क्या हमें पुण्य मिलेगा? जी हां, आपको अवश्य पुण्य मिलेगा। यह हम नहीं कह रहे हैं, यह बात प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द प्रमाण से ऋषियों के द्वारा सिद्ध है। इस विषय में भ्रान्तिरहित सुस्पष्ट बोध के लिए कर्मफल के कुछ प्रमुख सिद्धान्तों को जानना आवश्यक है। विस्तार के भय से यहां संक्षेप में लिखते हैं—

1. जिन कर्मों को हम स्वयं करते हैं उनका फल तो हमें ही मिलेगा इसमेंकिसी आर्यजन को संदेह नहीं है। जो कर्म हम स्वयं हम नहीं करते हैं, दूसरों से करवाते हैं, उन कर्मों का भी फल हमें मिलता है। जो हमने नहीं किया, न ही करवाया, परन्तु अनुमोदन किया (शरीर से पीठ थपथपाया/वाणी से शाबाशी दी/मन में समर्थन किया ऐसा ही होना चाहिए अच्छा किया आदि) उसका भी फल हमें मिलेगा। इनके उदाहरण क्रमशः दिये जायेंगे। [प्रमाण-**वितर्का हिंसादयः कृतकारितानुमोदिता लोभक्रोधमोहपूर्वका मृदुमध्याधि-मात्रा दुःखाज्ञानानन्तफला इति प्रतिपक्षभावनम्।** यो.द. 2.34]।

2. इसी विषय में एक दूसरा प्रमाण प्रस्तुत करते हैं—

अनुमता विशसिता निहन्ता क्रय-विक्रयी। संस्कर्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातकाः॥

(मनु० 5.51)

(1) मारने की आज्ञा देने वाला, (2) मांस को काटने वाला, (3) प्राणी को मारने वाला, (4) हत्या के लिए खरीदने वाला, (5) बेचने वाला, (6) पकाने वाला, (7) परोसने वाला और (8) खाने वाले ये सब हत्यारे और पापी होते हैं। इस प्रकार पुण्यकर्म में भी समझना चाहिए।

3. अग्निहोत्र के लिए भी साक्षात् प्रमाण उपलब्ध हैं—विद्वद्वरेण्य योगिराज महर्षि देव दयानन्द जी संस्कार विधि ग्रन्थ में गृहाश्रम प्रकरण अन्तर्गत '**अथाग्निहोत्रम्**' सायं-प्रातः.....दोनों स्त्री-पुरुष अग्निहोत्र भी दोनों समय में नित्य किया करें। किसी विशेष कारण से स्त्री वा पुरुष अग्निहोत्र के समय दोनों साथ उपस्थित न हो सकें तो एक ही अकेली स्त्री वा पुरुष दोनों की ओर का कृत्य कर लेवे अर्थात् एक-एक मन्त्र को दो-दो बार पढ़के आहुति करे। स्त्री पुरुष तो उपलक्षणमात्र है। कर्म का फल स्वयं को ही मिलता है अपने आप ठीक है, लेकिन उस एक मुख्य कर्म के साथ अनेक सहायक कर्म भी तो जुड़े हुए हैं, उन सभी सहायक कर्मों को न देखना केवल आहुति देने को ही कर्म कहना जड़ बुद्धि या काणे पुरुष के समान है। यदि कोई कहे स्वयं ही अग्निहोत्र करना चाहिए दूसरों की सहायता से नहीं तो शास्त्र की रीति से यदि विवेचना की जाए स्वयं बिना अन्यों की सहायता अर्थ यह होगा कि—

"यजमान स्वयं जंगल जाएं, जो वृक्ष या डालियां अपने आप गिर चुकी हैं, उन्हीं समिधाओं का चयन करें (खरीदने में तो दूसरों की सहायता आ जाएगी आपके मत में यजमान को फल नहीं मिलेगा और माचिस: अग्निपेटि भी दूसरों से बनी है) स्वयं अरणी मन्थन करें (नीचे एक काष्ठ फटा के ऊपर एक काष्ट दण्डा खड़ा करके दही बिलोने के समान मथना=घुमाना, जिस के घर्षण से अग्नि पैदा हो जाती है उसको अरणी मंथन कहते हैं।) पुनः उस अग्नि को शुष्क नारियल छिलके आदि से अधिक प्रज्वलित करके अग्निहोत्र के लिए यज्ञकुण्ड में स्थापन करें। उस अग्नि को राख से ढक कर सुरक्षित रखें, प्रतिदिन उसी में अग्निहोत्र करें। बुझ जाये तो पुनः स्वयं अरणी मंथन करें। स्वयं घर में गाय पालन करें, स्वयं घास-चारा उगायें-काटें-गाय को खिलायें, स्वयं दूध दोहें-दही जमाएं-मक्खन निकालें-गरम करें-घी बनावें फिर अग्निहोत्र करें।" इस स्वयं को और व्यापक करें तो जिस पात्र में दूध दोहना, आज्यास्थली (घृतपात्र) स्रुवा और यज्ञीय वस्त्र ये सब भी स्वयं बनायें, क्योंकि ये सब भी यज्ञ की सहयोगी वस्तुएं हैं इनके बिना आप यज्ञ नहीं कर सकते हैं और जो अज्ञानी यह मानते हैं, दूसरों से करवावें तो अपने को पुण्य नहीं मिलेगा, तो ये सब स्वयं करके दिखायें।

4. प्रश्न-क्या स्वयं अग्निहोत्र करने से जितना पुण्य मिलेगा दूसरों से करवाने पर भी उतना ही पुण्य मिलेगा? **उत्तर**-जैसे आप अपने घर में किसी साधु-महात्मा को बुलायें और

क्रमशः पृष्ठ 2 पर.....

www.thearyasamaj.org

क्या हमारे लिए दूसरा व्यक्ति.... प्रथम पृष्ठ का शेष....

स्वयं उनको भोजन परोसते हैं तो आपकी श्रद्धा कुछ अधिक होती है और परोसना भी एक कर्म है, उसका फल थोड़ा-अधिक मिलेगा, और जो दूसरों को परोसने के लिए कहता है उसके पुण्य में बहुत थोड़ा अन्तर पड़ेगा। यह बात सभी जानते हैं—घर में विवाह आदि संस्कार अथवा अन्य कोई निमित्त उपस्थित होने पर अथवा संस्थाओं में वार्षिकोत्सव मेले आदि जो भंडारा ऋषि लंगर प्रीति भोजन की व्यवस्था की जाती है, उसमें न पाचक को, न परोसने वाले को पुण्य मिलता है। उनको तो हम पैसे देकर कुछ काल के लिए खरीदते हैं। हाँ, कोई नि:शुल्क सेवा करता है तो उसे पकाने व परोसने कर्म का फल मिलेगा व सेवा भावना में वृद्धि होगी, फिर भी भोजन दान का पुण्य तो धनदाता को ही मिलेगा। वैसे ही धन दाता को ही अग्निहोत्र का पुण्य मिलेगा स्वयं करें तो बहुत अच्छा है, नहीं कर पाते तो दूसरों से करवाने पर भी पुण्य मिलेगा, दूसरा आपके लिए अग्निदेवता को हवि द्रव्य परोसेगा उसमें कोई चिन्ता की बात नहीं है।

5. इसका और एक प्रत्यक्ष दृष्टान्त देता हूँ—महर्षि देवदयानन्द जी द्वारा प्रतिष्ठापित परोपकारिणी सभा जिसमें सर्वाधिक ऋषिभक्त वैदिक विद्वान् सदस्य हैं, वहाँ **'अतिथि यज्ञ के होता'** एक अनुपम प्रकल्प चल रहा है उसके अन्तर्गत देशभर के सैकड़ों व्यक्ति अपने घर बैठे-बैठे अतिथि यज्ञ का पुण्य प्राप्त कर रहे हैं और यह सभी विद्वानों के द्वारा सम्मत है।

6. वैसे ही आज नगरों में क्या ग्रामों में भी गोमाता का पालन करने की अनुकूलता लोगों को नहीं है। उस कारण धार्मिक श्रद्धालु जन जो बलिवैश्वदेव यज्ञ को अपना कर्त्तव्य समझते हैं, वे लोग गोशाला, पक्षी-घर (जहाँ पक्षियों के लिए दान डाले जाते हैं, पानी पीने की व्यवस्था होती है) वहाँ दान देकर पुण्य प्राप्त कर सकते हैं।

7. आज कल पति-पत्नी दोनों नौकरी/व्यवसाय करते हैं। विदेश में और देश में भी बड़े नगरों में पास-पड़ोस से कोई सम्बन्ध नहीं रहता है। तो माता-पिता दिनभर घर में अकेला रहना पसन्द नहीं करते हैं, अपने गाँव में रहते हैं। यदि पुत्र माता-पिता के पास नहीं रहता है, परन्तु उनके भोजन-वस्त्र-आवास की समुचित व्यवस्था करता है तो पितृयज्ञ सम्पादित माना जाएगा।

8. राजा के पास समय नहीं होता स्वयं माता-पिता की सेवा नहीं कर सकता है, सेवकों से ही करवाते हैं।

अग्निहोत्र आदि हमारे लिए दूसरा कर सकता है—

इस विषय में केवल प्रत्यक्ष दृष्टान्त, युक्ति, तर्क, अनुमान प्रमाण ही है ऐसा नहीं है। इसमें शास्त्रीय प्रमाण भी कम नहीं हैं।

9. महर्षि दयानन्द जी अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध तक यज्ञ का वर्णन अपने ग्रन्थों में अनेकत्र उल्लेख करते हैं। कुछ बड़े-बड़े याग आपने भी सुने होंगे, जैसे पुत्रेष्टि याग राजा दशरथ ने किया था, अश्वमेध श्रीरामचन्द्र जी ने, राजसूय याग महाराजा युधिष्ठिर ने किया था। आज भी दक्षिण भारत में यह परम्परा जीवित है। बड़े-बड़े सोमयाग लगातार अनेक दिनों तक चलते हैं। पिछले वर्ष माननीय डॉ० धर्मवीर जी आदि 10 मूर्धन्य विद्वान् बैंगलोर शान्तिधाम देखने के लिए गए थे। आचार्य श्री सत्यजित् जी अप्रैल में 25-30 छात्रादि को लेकर पोटाम्बी, केरल गये थे सोमयाग के दर्शन के लिए। दोनों के साथ देखने का अवसर लेखक को प्राप्त हुआ है। उन यागों में 16 ऋत्विक् (पुरोहित) व 10 चमस अध्वर्यु होते हैं। सम्पूर्ण याग (8-10 दिन) का कार्य वेदि निर्माण से लेकर आहुति प्रदान तक, दूध दोहना, दही जमाना, हविष् द्रव्य निर्माण, चरू बनाना आदि समस्त कार्य पुरोहित लोग ही करते हैं। यजमान मुख्य होता है खाली बैठा रहता है (कभी कभार थोड़ी बहुत क्रिया औपचारिक यजमान करता है शेष सभी पुरोहित ही करते हैं)। मीमांसा दर्शन में प्रश्न उठाया गया कि सभी ने मिलकर याग का सम्पादन किया है तो पुण्य किसको मिलेगा? तो उत्तर आया यजमान को ही मिलेगा, सारा व्यय वही करता है पुरोहित ने तो अपना पारिश्रमिक दक्षिणा दान प्राप्त कर लिया है, उन्हें याग का फल नहीं मिलेगा। यह बात सभी शास्त्रीय विद्वान् जानते हैं और स्वीकार भी करते हैं। जिन्होंने शास्त्रों का दर्शन भी नहीं किया है, उन्हें कैसे ज्ञान होगा?

10. ब्राह्मण ग्रन्थ का वचन महर्षि वात्सायन ने न्यायदर्शन के भाष्य में उद्धृत किया है—'अशक्तो विमुच्यते' इत्येतदपि नोपपद्यते, स्वयमशक्तस्य बाह्यां शक्तिमाह। 'अन्तेवासी वा जुहुयाद् ब्रह्मणा स परिक्रीत: क्षीरहोता वा जुहूयाद् धनेन स परिक्रीत' इति (न्यायदर्शन भाष्य 4.1.60) इसका अर्थ इस प्रकार है—'कोई मनुष्य शरीर से शक्तिहीन हो जाए तो वह अग्निहोत्र कर्त्तव्य से मुक्त हो जायेगा क्या? नहीं होगा। जो स्वयं शरीर से अशक्त है वह बाह्य शक्ति सम्पन्न अन्य समर्थ व्यक्ति के द्वारा करावें। उसके लिए उसका शिष्य हवन करे वह शिष्य-ब्रह्म=विद्या द्वारा खरीदा हुआ है, अथवा आजीविका के लिए जो हवन करता है वह क्षीरहोता (पुरोहित) उस अशक्त व्यक्ति के लिए हवन करे, वह पुरोहित धन के द्वारा खरीदा हुआ है' यहाँ इतना स्पष्ट है कि एक के लिए दूसरा हवन कर सकता है।

11. मीमांसा दर्शन में भी यह आता है कि स्वर्गफल, पुण्य केवल यजमान को मिलता है या यजमान पत्नी को भी? उत्तर-दोनों को मिलता है।

12. पुरुष कार्य=नौकरी करता है वेतन मिलता है, पत्नी का त्याग करने पर आधा वेतन पत्नी के खाते में चला जाता है। वैसे ही पति के मरने के बाद भी पत्नी को पेंशन मिलती है। इससे क्या निकलता है? कर्म हम स्वयं न करने पर भी सहभागिता के कारण हमें फल मिलता है।

13. वैशेषिक दर्शन का सूत्र है 'बुद्धिपूर्वो ददाति' वेद में बुद्धिपूर्वक रचना है और बुद्धिपूर्वक दान देने का विधान है। प्रत्येक दानदाता सत्पात्र को ही दान देना चाहता है। क्यों? दान देने वाला अच्छा कर्म करेगा, अच्छे कर्म में हमारा धन व्यय करेगा तो हमें अधिक पुण्य मिलेगा, सामान्य कर्म हो तो सामान्य पुण्य और बुरे कर्म में लगाएगा तो हमें भी पाप लगेगा। कर्म दूसरा करता है फल दान दाता को मिलता है। वैसे अग्निहोत्र एक महान् कर्म है, उसके लिए कोई दान देता है तो पुण्य मिलने में कोई शंका ही नहीं होनी चाहिए।

14. माननीय डॉ. धर्मवीर जी के कथन अनुसार आर्यसमाज के विद्यमान सर्वोच्च विद्वान् महापण्डित आचार्य सत्यानन्द जी वेदवागीश जो अग्निहोत्र के प्रति अत्यन्त निष्ठावान् हैं, नित्य प्रति यज्ञ करने वाले हैं (समय व स्थिति की अनुकूलता न होने से) तब पण्डित जी घी वहाँ सामूहिक हवन में दान करते हैं। भले ही वहाँ दूसरा व्यक्ति आहुति डालता है पुण्य तो पण्डित जी को ही मिलेगा। आचार्य जी महान् ऋषिभक्त सैद्धान्तिक प्रामाणिक विद्वान् हैं। हमारे लिए अनुकरणीय हैं।

हमारे इस लेख का यह अभिप्राय कदापि नहीं है कि स्वयं घर में अग्निहोत्र न करें। स्वयं करेंगे, अपने घर में करेंगे तो वहाँ का वातावरण शुद्ध होगा, स्वयं उस शुद्ध वायु (जो होम से उत्पन्न करता है) को ग्रहण करेंगे शरीर व मन पर प्रभाव पड़ेगा। स्वयं अपने हाथों से डालेंगे तो भावना बनेगी, श्रद्धा से करते हैं, अच्छे संस्कार बनेंगे। इसका कोई निषेध नहीं करता है। जो नहीं कर पाते उन लोगों के लिए विधान है कि अन्यत्र/अन्य द्वारा करवाएँ। उसमें द्रव्य का त्याग होता है, उसमें कोई अन्तर नहीं है, तो पुण्य में भी अन्तर नहीं आयेगा। एक किलो घी अग्नि में डालने से जो पुण्य मिलना है वह मिलेगा ही चाहे घर में अग्निहोत्र करें, चाहे गुरुकुल में करवाएं पुण्य तुल्य ही रहेगा, जो अन्तर आयेगा वह अधिक लाभ नहीं मिलेगा, ऊपर लिख चुके हैं। बढ़िया भोजन करेंगे तो अधिक पौष्टिकता मिलेगी। बढ़िया भोजन प्राप्त न हो तो सामान्य भोजन को भी त्यागकर भूखा करना कौन-सी बुद्धिमत्ता है? क्या तर्क है?

जो स्वयं तो घर-घर में अग्निहोत्र कराने में समर्थ नहीं, उसका गुरुकुल, अग्निहोत्र केन्द्र, सामूहिक यज्ञ में घृत, सामग्री धन दान देने वालों को रोकना=पापी बनना है।

जिस किसी भी आश्रम, गुरुकुल, परोपकारी कल्याणकारी संस्था/सार्वजनिक स्थान में हवन/देवयज्ञ/दैनिक-अग्निहोत्र/बृहद् यज्ञ/ महायज्ञ/वेद पारायण यज्ञ होते हैं। सबके सब उदारमना लोगों के प्रत्यक्ष या परोक्ष दान से ही होते हैं। इस सर्वहितकारी श्रेष्ठतम यज्ञकर्म में भी दोष देखने वाले लेखक के कुत्सित विचारों का शास्त्रीय, तर्कसंगत, बुद्धिसम्मत, युक्तियुक्त, विवेकपूर्ण समाधान यहाँ प्रस्तुत करते हैं।

शास्त्र का परिज्ञान न हो और चित्त में मलिनता (राग-द्वेष भरा हुआ) है तो मन आहत और हृदय पर चोट लगेगी ही। इसके लिए किसी योग्य विद्वान् के पास जाकर अपने ज्ञान को बढ़ाएँ, योगाभ्यास में समय लगायेंगे, तो आपका मन आहत नहीं होगा, हृदय पर चोट नहीं लगेगी, शान्ति मिलेगी।

श्री राजेन्द्र जी जिज्ञासु ने पाक्षिक पत्रिका परोपकारिणी अगस्त (प्रथम) 2016 अंक में तड़प-झड़प स्तम्भ में 'यह क्या कर रहे हो? यह क्या हो

क्रमशः पृष्ठ 7 पर.....

www.thearyasamaj.org

सत्यार्थप्रकाश प्रश्नोत्तरी

नवम समुल्लास के प्रश्नोत्तर

❑ कन्हैयालाल आर्य, कोषाध्यक्ष आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा

गतांक से आगे....

प्रश्न 635. न्याय सूत्र में आता है जो दु:ख का अत्यन्त विच्छेद होता है वही मुक्ति कहाती है। क्या यह ठीक नहीं है?

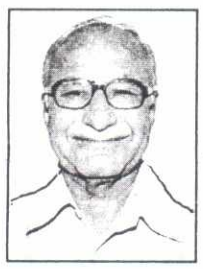

उत्तर-यह आवश्यक नहीं कि अत्यन्त शब्द अत्यन्ताभाव का ही नाम होवे, जैसे अत्यन्त दु:ख और अत्यन्त सुख इस मनुष्य को है कि इससे यही विदित होता है, इसको बहुत सुख व दु:ख है। इसी प्रकार यहां भी अत्यन्त शब्द का अर्थ 'बहुत' जानना चाहिए।

प्रश्न 636. यदि मुक्ति से भी जीव फिर आता है तो वह कितने समय तक मुक्ति में रहता है?

उत्तर-वे मुक्त जीव मुक्ति में प्राप्त होकर ब्रह्म में आनन्द को तब तक भोग के पुन: महाकल्प के पश्चात् मुक्ति सुख को छोड़ के संसार में आते हैं। इनकी संख्या यह है—

छत्तीस हजार बार सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय को जितना समय लगता है उतने समय तक जीव निरन्तर मुक्ति में रहता है, अर्थात् 31 नील 10 खरब 30 अरब वर्ष मुक्ति का काल है।

प्रश्न 637. सब संसार और ग्रन्थकारों का भी यही मत है कि जिससे पुन: जन्म-मरण में कभी न आवे, वह मुक्ति कहाती है?

उत्तर-यह बात कभी नहीं हो सकती, क्योंकि प्रथम तो जीव का सामर्थ्य, शरीरादि पदार्थ और साधन परिमित हैं, पुन: उसका फल अनन्त कैसे हो सकता है? अनन्त आनन्द को भोगने का असीम सामर्थ्य, कर्म और साधन जीवों में नहीं, इसलिए अनन्त सुख नहीं भोग सकते। जिनके साधन अनित्य हैं, उनका फल नित्य कभी नहीं हो सकता। और जो मुक्ति में से कोई भी लौटकर जीव इस संसार में न आवे तो संसार का उच्छेद अर्थात् जीव निश्शेष हो जाने चाहिएं।

प्रश्न 638. जितने जीव मुक्त होते हैं, उतने ईश्वर नये उत्पन्न करके संसार में रख दे, इसलिए संसार निश्शेष नहीं होगा?

उत्तर-जो ऐसा होवे तो जीव अनित्य हो जायें। क्योंकि जिसकी उत्पत्ति होती है, उसका नाश अवश्य होता है। फिर तुम्हारे मतानुसार मुक्ति पाकर भी विनष्ट हो जायेंगे। मुक्ति अनित्य हो गई। और मुक्ति के स्थान में बहुत-सा भीड़-भड़क्का हो जायेगा। क्योंकि वहाँ आगम अधिक और व्यय कुछ भी नहीं होने से बढ़ती का पारावार न रहेगा और जो ईश्वर अन्त वाले कर्मों का अनन्त फल देवे तो उसका न्याय नष्ट हो जाये। जो जितना भार उठा सके उतना उस पर धरना बुद्धिमानों का काम है। जैसे एक मन भर उठाने वाले के सिर पर दस मन धरने से भार धरने वाले की निन्दा होती है, वैसे अल्पज्ञ, अल्प-सामर्थ्य वाले जीव पर अनन्त सुख का भार धरना ईश्वर के लिये ठीक नहीं। चाहे कितना ही बड़ा धनकोष हो परन्तु जिसमें व्यय है और आय नहीं, उसका कभी न कभी दिवाला निकल ही जाता है। इसलिए वही व्यवस्था ठीक है कि मुक्ति में जाना, वहां से पुन: आना।

प्रश्न 639. जैसे परमेश्वर नित्य मुक्त पूर्ण सुखी है, वैसे ही जीव भी नित्य मुक्त और सुखी रहेगा तो कोई भी दोष न आवेगा।

उत्तर-परमेश्वर अनन्त स्वरूप, सामर्थ्य, गुण, कर्म, स्वभाव वाला है, इसलिए वह कभी अविद्या और दु:ख बन्धन में नहीं गिर सकता। जीव मुक्त होकर भी शुद्धस्वरूप, अल्पज्ञ और परिमित गुण, कर्म, स्वभाव वाला रहता है, परमेश्वर के सदृश कभी नहीं होता।

प्रश्न 640. जीव मुक्त होकर भी शुद्धस्वरूप, अल्पज्ञ और परिमित गुण, कर्म, स्वभाव वाला रहता है। जब ऐसा है तो मुक्ति भी जन्म-मरण के सदृश है, इसके लिए श्रम करना व्यर्थ है?

उत्तर-मुक्ति जन्म-मरण के सदृश नहीं, क्योंकि जब तक 36000 वार उत्पत्ति और प्रलय का जितना समय होता है, उतने समय पर्यन्त जीवों को मुक्ति के आनन्द में रहना, दु:ख का न होना क्या छोटी बात है? जब आज खाते-पीते हो, कल भूख लगने लगती है, पुन: इसका उपाय क्यों करते हों? जब क्षुधा, तृषा, क्षुद्र धन, राज्य, प्रतिष्ठा, स्त्री, सन्तान आदि के लिए उपाय करना आवश्यक है, तो मुक्ति के लिए क्यों न करना? **क्रमश:.....**

अजीब पहेली

❑ भद्रसेन वेद-दर्शनाचार्य

गतांक से आगे....

सामान्य रूप से हमारा शरीर पृथिवी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इन पांच भूतों का पुतला है। इनमें से पृथिवी का अंश अधिक होने से इसको पार्थिव भी कहते हैं। जैसे पृथिवी से बनी दूसरी चीजें शस्त्र से कट जाती हैं, आग से जल जाती हैं, जल में गल जाती हैं और वायु में सूख जाती हैं। ऐसे ही हमारा यह पार्थिव शरीर किसी न किसी प्रकार के शस्त्र का शिकार हो जाता है। अनेकविध अग्नियों में से किसी भी प्रकार की आग से जल उठता है, जल इसे गलाता है और वायु सुखा देती है। तभी तो यजुर्वेद में कहा है—इस शरीर का अन्त राख ही है, जो कि अन्त में मिट्टी में मिल जाती है।

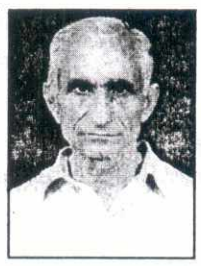

वैसे तो देह का शरीर नाम भी इसीलिए ही है कि यह विनाशशील है। अत: जब कभी जहां कहीं से कट जाता है तथा न जाने किस घटना के कारण कब यह ठण्डा हो जाए क्योंकि शरीर शब्द हिंसा अर्थ वाली शृ धातु एवं ठण्डा होना अर्थ वाली शम् धातु से बनता है। तभी तो किसी कवि ने कहा है—

आदमी का जिस्म क्या है जिसपै शैदा है जहाँ,
एक मिट्टी की इमारत और मिट्टी का मकां।
खून का गारा है इस में और ईंटें हड्डियाँ,
चन्द सांसों पर खड़ा है यह खयाली आसमाँ।
मौत की पुरजोर आँधी जब इससे टकराएगी,
देख लेना यह इमारत खाक में मिल जाएगी।

यही भाव मृत्यु शब्द का भी है, क्योंकि मृङ् (प्राण-त्यागे=प्राणों का छूटना, निकलना) धातु से मृत्यु, मृत, मरण शब्द बनते हैं। इस सारे का अभिप्राय है कि किसी चेतन आत्मा का अपने कर्मों के अनुसार परमात्मा की व्यवस्था से प्राप्त किए हुए पहले शरीर, इन्द्रिय और मन से अलग होना। जैसे सीप से मोती के निकल जाने के बाद वह सीप बे-कीमत की होकर रह जाती है। वैसे ही इस नित्य आत्मा के शरीर से निकलते ही, यह कञ्चन काया मिट्टी का ढेर ही होकर रह जाता है और तब यह शीघ्र ही सड़ना शुरू हो जाता है।

मृत्यु शब्द पर विचार करते हुए शब्दों में छिपे रहस्य को खोलने में कुशल निरुक्तकार ने लिखा है—यह मारती है अर्थात् पहले से प्राप्त शरीर, इन्द्रिय और मन से नित्य आत्मा को अलग करती है और फिर अलग हुए इस अजर-अमर आत्मा को नया शरीर धारण कराने के लिए ले जाती है। तभी आत्मा को अपने कर्मों के अनुरूप एक नए शरीर को धारण का अवसर प्राप्त होता है। हम अपने आसपास आए दिन देखते हैं कि अनेक जीर्ण-शीर्ण, विविध चिन्ताग्रस्त कलेवर से वियुक्त हो रहे हैं और दूसरी ओर लाड़-चावों से भरे नए निश्चिन्त शिशु जीवन को अनेक प्राप्त कर रहे हैं। इसी बात को दृष्टान्त के साथ समझाते हुए गीताकार ने कहा है—जैसे कोई फटे-पुराने कपड़ों को उतारकर खुशी-खुशी दूसरे अच्छे वस्त्रों को धारण करता है। उसी प्रकार यह अजर-अमर आत्मा जीवन यात्रा करते-करते थके हारे अक्षम (जो कि अब अपने शारीरिक कर्त्तव्य कर्मों को करने में सर्वथा असमर्थ हो गया है, ऐसी जर-जर) काया को छोड़कर आशा भरे नए देह को धारण करता है।

इसी भाषा को अंग्रेजी भाषा के कवि लांगफैलो ने इस रूप में व्यक्त किया है—'मृत्यु मृत्यु [=सर्वनाश] नहीं है, जैसी कि हमें दिखाई देती है। वह तो जीवन का एक परिवर्तन है, थोड़े दिनों का हमारा यह जीवन, उस दिव्य जीवन का एक बाह्य भाग है। जिसके प्रवेश द्वार को हम मृत्यु कहते हैं।' अत: चोला बदलने का नाम या अंतराल ही मृत्यु है, तभी तो कहा है—

निर्भय स्वागत करो मृत्यु का,
मृत्यु एक विश्राम-स्थल।
जीव जहां से चलता है,
धारण कर नवजीवन सबल।
मृत्यु एक सरिता है, जिसमें-
श्रम से कातर जीव नहा कर।
फिर नूतन धारण करता है,
कार्या पूर्व बहा कर।

अत: मौत के सम्बन्ध में यही कहना चाहिए कि मृत्यु जीवन की महान् यात्रा का एक पड़ाव है जिस पर यात्री विश्राम करके फिर आगे चल देता है। तभी तो कहा है—

मौत इक जिन्दगी का वक्फा है।
यानी आगे चलेंगे दम लेकर॥

हाँ, अब आगे अगली बैठक में विचार करेंगे। **क्रमश:**

www.thearyasamaj.org

स्वास्थ्य-चर्चा... सायटिका को ठीक करने वाला तेल

दुनिया की सबसे पुरातन सभ्यता वाले राष्ट्रों का नाम लिया जाता है तो भारत जिसे आर्यावर्त भी कहा जाता रहा है, का नाम पहले पायदान पर स्वत: आ जाता है। यह एक ऐसा अनोखा राष्ट्र है जो आधुनिकता के मार्ग पर चलते हुए भी अपनी गौरवशाली पुरानी संस्कृति का पहलू मजबूती से पकड़े हुए है। इतिहास गवाह है कि हमारे ऊपर हजारों बर्बर आक्रमण हुए लेकिन हमारी हस्ती को कोई भी नापाक साजिद मिटा नहीं सकी। जहां अनेक प्राचीन सभ्यताएं अब केवल इतिहास की पुस्तकों में सिमट कर रह गयीं, वहीं भारतीय सभ्यता, संस्कृति का परचम आज भी लहरा रहा है। कुछ तो खास बात जरूर है जो हमें औरों से अलग रखती है। यदि बात चिकित्सा क्षेत्र से जुड़ी हुई कही जाये तो गहराई में जाकर मालूम पड़ता है कि हजारों-हजार साल पहले कही गई हमारे आयुर्वेदाचार्यों की बातें आज भी विज्ञान की कसौटी पर पूरी तरह खरी उतरती हैं। भले ही आयुर्वेद के त्रिदोष सिद्धान्त को आधुनिक चिकित्सा क्षेत्र वाले मान्यता न दें, लेकिन सत्य को झुठला पाना किसी के लिए भी संभव नहीं है। आयुर्वेद कहता है कि वात, पित्त और कफ के असन्तुलन से ही रोग होते हैं। यदि इन्हें संतुलित कर दिया जाये तब रोग स्वत: मिट जाता है। अब जैसे एक रोग है, गृध्रसी का। सायटिका नर्व में वायु (वात) प्रकुपित हो जाने से पनपे इस रोग का आधुनिक पैथी से इलाज कराया जाये तो वे 'पेन किलर' औषधियों से इलाज करने की असफल कोशिश करते हैं। नतीजा यह होता है कि रोगी इन दर्दनिवारक औषधियों को उदरस्थ करते-करते, इनके साइड इफेक्ट को ही प्राप्त करता रहने से अन्य कई रोगों से भी घिर जाता है, उधर साइटिका रोग आंख मिचौली करता हुआ अपनी स्थिति 'जस की तस' बनाये रखता है।

आयुर्वेद सहित अन्य पैथियों जैसे यूनानी चिकित्सा, एक्यूप्रेशर, एक्यूपंक्चर, होम्योपैथी, प्राकृतिक चिकित्सा में इस सायटिका रोग का इलाज है। आयुर्वेद सिद्धान्त के अनुसार सायटिका नर्व में प्रकुपित हुई वायु (वात) जैसे साम्यावस्था में आयेगी, वैसे ही रोग मिट जायेगा। चाहे यह काम दवाइयों से हो या अन्य उपायों से। आयुर्वेद में कई औषधियां हैं जिनके खाने या लगाने से 'रींगण वायु' के नाम से प्रचलित सायटिका का रोग मिट जाता है।

अब आपकी जानकारी के लिए एक ऐसे तेल की जानकारी दी जा रही है जिसकी मालिश से रोग जल्दी ही विदा लेने को विवश हो जाता है। यह तेल 'कायफल' से तैयार किया जाता है। अधिकांश लोग इस तेल के बारे में संभवत: नहीं जानते, यहां तक अनेक चिकित्सक बन्धु भी इस तथ्य से अनजान ही होंगे कि कायफल का तेल भी बनाया जाता है जो सायटिका पर बहुत फायदा पहुंचाता है। गृध्रसी नाशक कायफल का तेल बनाने की विधि तो आगे बताई जायेगी, इससे पहले यह समझना भी ठीक रहेगा कि आखिर कायफल है क्या?

कायफल हरीतक्यादि वर्ग की तथा नैसर्गिक क्रमानुसार अपने कट्फल कुल (Myrticaceal) की प्रमुख वनौषधि है। चरक और सुश्रुत के संधानीय, शुक्र शोधनीय, वेदना स्थापनीय एवं लोध्रादि तथा सुरसादि गणों में इसकी गणना की गई है। कायफल के वृक्ष मध्यम आकार के मोटे सदा हरे-भरे छायादार और सुगंध बिखेरने वाले होते हैं। इसकी छाल बादामी धूसर या कालिमा युक्त चौथाई से आधा इंच तक मोटाई वाली, खुरदरी तथा छोटे-छोटे लम्बे धब्बे युक्त होती है, सामान्यत: इसी छाल को 'कायफल' कहा जाता है। कायफल के नाम से यह मार्केट में पंसारियों के यहां सहजता से मिल जाती है।

बन्धुओ! सायटिका नाशक जिस तेल का वर्णन आगे किया जा रहा है। वह इसी छाल जिसे कायफल कहते हैं, से बनाया जाता है।

तेल कैसे बनाया जाये?

आधा किलो कायफल छाल चूर्ण (जो तार की छलनी से छना हुआ हो) लें। अब एक किलो सरसों का तेल धीमी आंच पर पकायें और आग पर रखे तेल में 10-10 ग्राम कायफल का उक्त चूर्ण थोड़ी-थोड़ी देर में डालते जायें। धीरे-धीरे जब डाला गया चूर्ण जल जाये तब तेल को कपड़े से एक पात्र में छान लें। कपड़े में जो किट्ट भाग बचे उसे एक अन्य पात्र में सुरक्षित रखें।

1-2 दिन में छने तेल को निथार कर बोतलों में भर दें। इस तेल वाले पात्र से निथार कर अलग किए तेल के बाद नीचे गाद (किट्ट भाग) बचा दिखाई देगा, इसे पहले रखे किट्ट भाग में मिलाकर रखें, यी भी काम की चीज है।

अब पीड़ित भाग पर 'कायफल तेल' की धीरे-धीरे नित्य 2 घण्टे तक मालिश करें, इस दौरान हथेली को अग्नि पर सेंकते रहें ताकि मालिश में गर्मी बनी रहे। पश्चात् किट्ट को एक सूती मोटे कपड़े में बांधकर पोटली बनाकर इसे आग पर बार-बार गरम करते हुए सिकाई करें, कुछ देर ऐसा करने के बाद इस किट्ट को पीड़ित स्थान पर लेप कर ऊपर से पट्टी बांध दें। इस प्रकार नित्य मालिश-सिकाई से सायटिका कुछेक दिनों में ही रफूचक्कर हो जाता है। यदि सायटिका को 4-5 दिनों में ही दूर करना चाहते हैं तो उक्त प्रयोग के साथ निम्न प्रयोग भी करें।

कायफल के 500 ग्राम मोटे चूर्ण में 5 किलो पानी मिलायें और 2 किलो पानी रहने तक इसे उबालते रहें। फिर छानकर दो किलो घी में इसे छने क्वाथ को मिलायें और अग्नि पर गर्म करें, जब पकते-पकते पानी सारा जल जाये और घी मात्र शेष रहे तब इस घी को सुरक्षित रखलें। 15 से 25 ग्राम तक इस घी का नित्य सेवन करें, इसके साथ योगराज गुग्गल की दो-दो गोलियां भी चबाकर खायें। इस प्रकार उपरोक्त सारे उपाय यानी रोज कायफल के तेल की दो घण्टे पीड़ित भाग पर गर्म हथेलियों से मालिश फिर कायफल के किट्ट भाग की पोटली बनाकर उसका सेंक और फिर उसे लेप कर पट्टी बांधना। इसके अतिरिक्त उपरोक्त 'कायफल के घी' का सेवन, साथ में योगराज गुग्गुल की 2-2 गोलियां दिन में 2 बार लें। अगले हफ्ते आप सायटिका को भूल चुके होंगे।

हरियाणा सोसायटी एक्ट-2012 के अनुसार **आर्य प्रतिनिधि सभा हरियाणा** दयानन्दमठ रोहतक के **त्रिवार्षिक चुनाव** के लिए पदाधिकारियों एवं कार्यकारिणी सदस्यों के चुनाव सम्बन्धी

निर्धारित समय-सारणी

क्र०	विषय	दिनांक	समय
1.	नामांकन पत्र भरना नामांकन फीस 1000/- रु० स्थान : सभा कार्यालय दयानन्दमठ रोहतक	23.11.16	प्रात: 10 से 1 बजे तक
2.	नामांकन पत्रों की जांच	25.11.16	प्रात: 9 से 4 बजे तक
3.	चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों की सूची जारी करना	26.11.16	सायं 4 बजे तक
4.	नामांकन पत्र वापिसी	28.11.16	प्रात: 10 से 4 बजे तक
5.	चुनाव लड़ने वाले सदस्यों की अन्तिम सूची	29.11.16	सायं 4.30 बजे तक
6.	चुनाव-चिह्न आवंटित करना	30.11.16	प्रात: 9 से 3 बजे तक
7.	चुनाव-प्रचार समाप्त	09.12.16	सायं 4 बजे
8.	साधारण सभा बैठक	11.12.16	प्रात: 9 से 10.30 बजे तक
9.	पदाधिकारियों एवं कार्यकारिणी सदस्यों का चुनाव स्थान : सभा कार्यालय दयानन्दमठ रोहतक	11.12.16	प्रात: 11 से 4 बजे तक
10.	वोटों की गिनती तथा परिणाम की घोषणा	11.12.16	वोटिंग के तुरन्त बाद
11.	विजयी उम्मीदवारों की सूची	11.12.16	परिणाम के तत्पश्चात्
12.	विजयी उम्मीदवारों को प्रमाण-पत्र	11.12.16	उम्मीदवारों की सूची जारी करने के पश्चात्

नोट-1. नामांकन फार्म की जमा की गई राशि 1000/- रु० वापिस नहीं होगी।

2. चुनाव लड़ने वाले इच्छुक उम्मीदवारों को साधारण सभा के सदस्यों (प्रतिनिधियों) में से एक सदस्य द्वारा फार्म को सत्यापित करवाना आवश्यक होगा।
3. साधारण सभा की बैठक सभा कार्यालय परिसर दयानन्दमठ रोहतक में होगी।
4. चुनाव के लिए सभा द्वारा जारी किये गए पहचान-पत्र अवश्य साथ लायें। जो पहचान-पत्र लाएगा उसी का मतदान डलवाया जाएगा।
5. यदि किसी मतदाता को पहचान-पत्र नहीं मिला या गुम हो गया है उस सूरत में उसके पास मूलरूप में चुनाव आयुक्त (भारत) से जारी पहचान-पत्र, डाइविंग लाइसेंस या राशनकार्ड, इनमें से कोई एक साथ लायें।
6. प्रतिनिधियों की सूची (वोटर लिस्ट) सभा की वैबसाईट **www.apsharyana.org** पर देख सकते हैं।

(डॉ० सुरेन्द्र कुमार)
चुनाव अधिकारी
आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा
दयानन्दमठ, रोहतक

www.thearyasamaj.org

वर्णाश्रम व्यवस्था समाज व राष्ट्र के लिए कितनी हितकर?

❑ खुशहालचन्द्र आर्य

हमारे ऋषि-मुनियों ने वर्ण तथा आश्रम व्यवस्था बहुत ही सोच-समझकर बनाई थी। ये दोनों ही व्यवस्था समाज व राष्ट्र की उन्नति व समृद्धशाली बनाने में काफी सहायक सिद्ध हुई है। इन दोनों व्यवस्थाओं का यदि ठीक ढंग से सदुपयोग किया जावे तो ये समाज व राष्ट्र के लिए काफी उपयोगी हो सकती है। जैसे भारत में महाभारत के विश्वयुद्ध तक लाभकारी होती रही है। वर्ण-व्यवस्था समाज व राष्ट्र के कार्यों को सुचारु रूप से चलाने के लिए 'कार्य विभाजन' है। यानि प्रत्येक वर्ण के अपने अलग-अलग कार्य जो उनके जिम्मे किया है, उनको यदि वे अपने कर्त्तव्य भाव से करते हैं तो समाज व देश के लिए बड़े सहायक व हितकारी सिद्ध हो सकते हैं। अन्यथा वे समाज व राष्ट्र के लिए घातक भी सिद्ध हो जाते हैं। जैसे अभी हो रहे हैं।

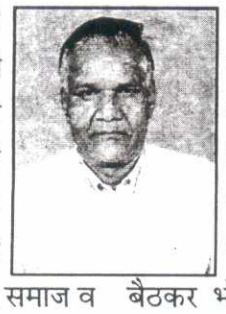

वर्ण चार हैं—(1) ब्राह्मण, (2) क्षत्रिय, (3) वैश्य, (4) शूद्र। प्रत्येक समाज व राष्ट्र में तीन दोष या कमजोरियाँ होती हैं—(1) अज्ञान, (2) अन्याय, (3) अभाव। प्रथम तीन वर्ण क्रमश: इन तीन दोषों को मिटाने यानि दूर करने के लिए बनाये गये थे। ब्राह्मण वेदज्ञान द्वारा अज्ञान को दूर करता था। क्षत्रिय अपने बल व साहस के द्वारा अन्याय को दूर करता था। वैश्य अपने व्यापार व कृषि द्वारा अभाव को दूर करता था। इस प्रकार इन तीनों की प्रत्येक समाज व राष्ट्र को बड़ी आवश्यकता होती थी। ये तीनों वर्ण अपने कार्य व कर्त्तव्य का सुचारु रूप से पालन करते रहें इसलिए उनकी सेवा के लिए शूद्र वर्ण बनाया था। शूद्र वह होता है जो पढ़ाने से भी न पढ़े, ऐसा व्यक्तिजिसमें अज्ञान, अन्याय व अभाव को दूर करने की क्षमता न हो, उस व्यक्ति को पहले तीन वर्णों की सेवा करने का भार दिया गया था ताकि वे वर्ण निश्चिन्त होकर अपने कर्त्तव्य को सुचारु रूप से पूर्ण कर सकें। यह वर्ण व्यवस्था राष्ट्र व समाज का कार्य सुचारु रूप से चलता रहे, उसमें कोई विघ्न-बाधा न आवे इसलिए बनाई गई थी। चारों वर्णों में कोई छोटा-बड़ा नहीं था। सभी समाज व राष्ट्र के समान अंग थे। सभी को धार्मिक, सामाजिक व अन्य कार्य करने की बराबर छूट थी यानि सब स्वतन्त्र थे। जैसे किसी बरात को भोजन खिलाने के लिए सुन्दर व्यवस्था बनाए रखने के लिए किन्हीं चार व्यक्तियों को जिम्मा दिया जाता है। एक व्यक्ति हलवा परोसता है, एक व्यक्ति पूड़ी, एक व्यक्ति पानी और एक व्यक्ति साग परोसता है। ये सभी काम जरूरी हैं। इनमें कोई काम छोटा-बड़ा नहीं है। बरात को सुचारु रूप से भोजन करवाने के बाद वे चारों व्यक्ति एक साथ बैठकर भोजन करते हैं और उनका भोजन भी समान होता है। इसी प्रकार चारों वर्ण भी समान हैं। उनको धार्मिक, सामाजिक व अन्य कार्यों को करने की समान सुविधाएं होनी चाहिये।

महाभारत के विश्वव्यापी युद्ध में सभी योद्धा, धर्माचार्य, विद्वान् तथा राजनैतिक समाप्त हो जाने से स्वार्थी व कम पढ़े-लिखे ब्राह्मण, विद्वान् बन गए और उन्होंने अपना स्वार्थ सिद्ध करने तथा अपना पेट भरने के लिए अपने मत-मतान्तर चला दिए और वर्ण जो कर्म पर निर्धारित करते थे उनको जन्म से जाति के रूप में मानना आरम्भ कर दिया और उन्होंने प्रचलित कर दिया कि ब्राह्मण के घर पैदा हुआ बालक ब्राह्मण ही होगा, चाहे वह पढ़ा-लिखा हो या अनपढ़ हो। अन्य जातियों के लोग उसका ब्राह्मण समझकर ही सम्मान करेंगे। इससे हानि यह हुई कि ब्राह्मणों ने स्वयं ने भी वेदों को पढ़ना छोड़ दिया और दूसरी जाति के लोगों से भी वेद पढ़ने का अधिकार छीन लिया, यहाँ तक कि स्त्री व शूद्रों को तो वेद पढ़ना पाप समझा जाने लगा। इससे वेदज्ञान प्राय: लुप्त हो गया, जिससे अनेक प्रकार के अन्धविश्वास व पाखण्ड चल पड़े। जैसे मूर्तिपूजा, अवतारवाद, अनेक देवी-देवताओं की पूजा, श्राद्ध-तर्पण, भूत-प्रेत, गण्डा-डोरी आदि प्रचलित हो गये, जिससे सही ईश्वर की उपासना, यज्ञ, सत्संग आदि छोड़ दिए और सभी वर्ण वाले अपना-अपना कर्त्तव्य छोड़कर केवल अपने स्वार्थ में लिप्त हो गए, जिससे केवल भारत ही नहीं बल्कि विश्व के सभी लोग पतन की ओर अग्रसर हो गए जिससे आज मानव मात्र की स्थिति बड़ी नाजुक बनी हुई है।

वर्णों जैसी हालत आश्रमों की है। आश्रम भी हमारे ऋषि-मुनियों ने मनुष्य को व्यक्तिगत रूप में पूर्ण बलशाली, विद्वान्, चरित्रवान् व पूर्ण मानव यानि जिसमें मानवता के सभी गुण, दया, परोपकार, साहस, उदारता, सहनशीलता आदि हो, ऐसा मानव बनाने की व्यवस्था की थी। इसके लिए मनुष्य की आयु एक सौ वर्ष की निर्धारित करके, उसको चार भागों में बांटा था। इसके आरम्भ में पच्चीस वर्ष ब्रह्मचर्य आश्रम कहलाता है, जिसमें वह गुरुकुल में पढ़कर बल व बुद्धि से पूर्ण व सुदृढ़ होता है फिर पच्चीस से पचास वर्ष तक गृहस्थ आश्रम होता है। इसमें वह अच्छी सन्तान पैदा करके देश को सुदृढ़ बनाता है। और गृहस्थ का पालन करते हुए बाकी तीन आश्रमों को भी आश्रय देता है, इसीलिए यह आश्रम जेष्ठ व श्रेष्ठ माना गया है। तीसरा आश्रम वानप्रस्थ का है। यह पचास से पचहत्तर वर्ष तक का होता है। इसमें मनुष्य स्वयं अकेला या अपनी धर्मपत्नी को साथ लेकर समाज की सेवा नि:शुल्क करता है और समाज उसका जीवन यापन करता है। वह समाज की हर प्रकार की सेवा बिना वेतन लिए कर्त्तव्य भाव से करता है। जैसे गुरुकुलों का आचार्य बनकर, आर्यसमाजों का पुरोहित बनकर या गऊशाला, अनाथालय व औषधालय की सेवा करता है। इस आश्रम के होने से देश की सभी सेवा संस्थाएं सुचारु रूप से चलेंगी और राष्ट्र दिनोदिन उन्नति करेगा। चौथा आश्रम पचहत्तर से एक सौ वर्ष तक का है, इसे संन्यास आश्रम कहते हैं। इसमें मनुष्य भगवे वस्त्र (जो त्याग का प्रतीक है) धारण करके पूर्ण रूप से परोपकारी कार्यों में लग जाता है। उसके लिए पूरा विश्व एक परिवार हो जाता है और पूरा विश्व उसकी सन्तान के समान हो जाता है। वह एक स्थान पर न रहकर ग्राम-ग्राम व घर-घर जाकर वेदप्रचार करता है और गृहस्थी उनका आदर-सत्कार करता है। इस प्रकार ये चारों आश्रम मनुष्य के जीवन का विस्तार बढ़ाते हैं। ब्रह्मचर्य में व्यक्ति अपने व्यक्तिगत बल और बुद्धि को बढ़ाकर पूर्ण यौवन प्राप्त करता है। गृहस्थ में व्यक्ति अपने स्वयं का ध्यान रखते हुए परिवार व समाज का भी ध्यान रखता है। इस प्रकार उसका जीवन व्यक्तिगत से समाज तक हो गया। वानप्रस्थ में व्यक्ति परिवार व समाज से उठकर पूरे राष्ट्र का हो जाता है। इस प्रकार उसका विस्तार समाज से राष्ट्र तक हो गया। संन्यास में व्यक्ति राष्ट्र से पूरे विश्व का हो जाता है। इस प्रकार आश्रम व्यवस्था विश्व शान्ति और मनुष्य की उन्नति व विकास की बहुत सुन्दर व्यवस्था है। इस व्यवस्थाओं को कर्त्तव्य भाव से सुचारु रूप से करने से मोक्ष प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। परन्तु महाभारत के बाद इन चारों व्यवस्थाओं की अवहेलना की जा रही है। प्रथम आश्रम के लिए बच्चों को गुरुकुल नहीं भेजा जाता है। गृहस्थ में भी पंचमहायज्ञों का पालन नहीं होता और मनुष्य वानप्रस्थ व संन्यास में न जाकर गृहस्थ में ही अपना पूरा जीवन व्यतीत कर देता है। इन दोनों व्यवस्थाओं का यदि सुचारु रूप से पालन किया जावे तो कोई कारण नहीं कि मनुष्य का जीवन सुखी न बने और वह मोक्ष की ओर अग्रसर न हो।

ये दोनों व्यवस्थायें समय के प्रभाव से काफी कमजोर हो गई थी तब ईश्वर की अपार कृपा से सन् 1824 में गुजरात प्रान्त के टंकारा ग्राम में एक महामानव का जन्म हुआ जिसका बचपन का नाम मूलशंकर था। वह 22 वर्ष की आयु में सच्चे शिव की खोज में घर से निकल पड़ा और संन्यासी वेश में स्वामी पूर्णानन्द से स्वामी दयानन्द सरस्वती नाम रखवाकर अनेक वर्षों तक पूरे भारत का भ्रमण करके अपने तपस्वी जीवन में अनेक दु:खों, कष्टों व अभावों को सहते हुए किसी के बताने पर सद्गुरु विरजानन्द के पास मथुरा जा पहुंचे। वहां तीन वर्ष सद्गुरु की गोद में बैठकर वेदाध्ययन किया और फिर गुरु के आदेश से ही अपना पूरा जीवन वेदों का प्रचार करके विश्व में पुन: वर्णाश्रम व्यवस्था का प्रचलन किया। साथ ही विश्व से अज्ञान, अन्धविश्वास व पाखण्ड को मिटाने का पूरा प्रयत्न किया और काफी हद तक सफलता भी मिली। इन कार्यों को करके योगिराज देव दयानन्द ने हमारे ऊपर जो उपकार किया है, उसके लिए हम महर्षि दयानन्द के सदा ऋणी रहेंगे।

संपर्क-गोविन्द राम आर्य एण्ड सन्स, 180 महात्मागांधी रोड, (दो तल्ला) कोलकाता-7 फोन 033-22183825, 64505013, ऑफिस-26758903

www.thearyasamaj.org

नई मुद्रा का तब लाभ होगा

❑ प्राचार्य अभय आर्य, रोहतक

देश के प्रधानमंत्री माननीय श्री नरेन्द्र मोदी जी ने प्रचलित 500 व 1000 के पुराने नोटों के स्थान पर नए 500 व 2000 के नोटों का मुद्रण करवाकर उन्हें प्रचलित करने का फैसला लिया। हमें इसमें संदेह नहीं कि इससे आतंकवाद के पोषण के लिए जो नकली नोटों का प्रयोग होता था वह रुकेगा। मॉर्केट में नकली नोटों का प्रचलन बन्द होकर रुपये की कीमत बढ़ेगी। नीति अच्छी है, सारे देश में हल्ला है। लेकिन क्या इस कहावत का कभी चरितार्थ होगा, **'हंगामा खड़ा करना मेरा मकसद नहीं, सूरत बदलनी चाहिए।'** कहीं ऐसा तो नहीं कि बैंकों

की लोन देने की क्षमता बढ़कर, उद्योगपतियों की सुविधा तक ही इस क्रिया का लाभ सीमित रह जाए। इसका लाभ तब माना जाएगा जब आम आदमी 100 का नोट हाथ में लेकर उसमें 500 के नोट की शक्ति अनुभव करेगा।

खबरों में आतंकवाद पर लगाम लगा है। आंकड़ों में महंगाई दर भी कम हुई है। सस्ता लोन उपलब्ध होने की संभावनाओं की भी खबर आई है। इस परिवर्तन से आम आदमी को जो परेशानी हुई है, उसे उसने सिर माथे पर लिया है, इसी आशा के साथ कि राष्ट्र की उन्नति हो। अब बारी है मोदी सरकार की। अब देखना है कि सरकार की नीयत कितनी साथ है। अब पैट्रोल, डीजल के दाम कभी 1-2 रुपया बढ़ाने, कभी घटाने का खेल बंद करना होगा। अब सिर्फ कमी ही आनी चाहिए और वह भी आधे दामों तक। दाल, दूध, सब्जी, फल, किराया आदि आम आदमी के दायरे में आना चाहिए। रही बात राहुल गांधी व ममता बनर्जी के इस नीति के विरोध की बात, तो उनका यह विरोध कोई मायने नहीं रखता। इनका अलगाववादी प्रेम किससे छिपा है, ऐसी अनेक घटनाओं में ये बहस का मुद्दा बन चुके हैं। रही मायावती जी की बात तो उनका नोटमाला प्रेम, घोटालों के नाम व दिल्ली के मुख्यमंत्री श्री केजरीवाल को बाहर से चंदा आने की खबर ऐसे विषय हैं कि इनके द्वारा इस नीति का विरोध खिसियानेपन के अतिरिक्त अन्य कुछ प्रतीत नहीं होता। जब आतंकवाद, अलगाववाद, तस्करी, सट्टेबाजी पर रोक लग रही है, बाजार में प्रचलित नकली नोटों के रुकने से रुपये की कीमत बढ़ेगी, ऐसे में विरोध क्यों?

मोदी सरकार को भी चाहिए कि आंकड़ों से तथ्यों को न दिखाकर धरातल पर उन्हें लेकर आएं, वरन् जनता खिन्न हो जाएगी और एक बड़ी ठगी होगी।

पोस्टर मेकिंग प्रतियोगिता सम्पन्न

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा द्वारा संचालित आर्य बाल भारती पब्लिक स्कूल पानीपत ने एक बार फिर पोस्टर मेकिंग प्रतियोगिता में धूम मचाई। वहां पर पानीपत के लगभग सभी स्कूल आए हुए थे जिसमें से आर्य बाल भारती स्कूल ने द्वितीय स्थान प्राप्त किया। इस प्रतियोगिता में आर्य बाल भारती पब्लिक स्कूल की आठवीं कक्षा की छात्रा संयोगिता ने भाग लिया और द्वितीय स्थान प्राप्त किया। Lion Club की तरफ से उसे 2100 रुपये नकद देकर सम्मानित किया गया। वहां पर यह घोषणा की गई कि अगर उसकी पेंटिंग Bombay Magazine में छपी तो उसे 70,000 रुपये नकद दिये जायेंगे और वहीं दूसरी ओर बाल भवन में हो रही जिला स्तरीय प्रतियोगिताओं में भी आर्य बाल भारती स्कूल ने पुरस्कार जीते। आठवीं कक्षा की सोनिया ने रंगोली में तृतीय स्थान प्राप्त किया। आठवीं कक्षा की नेहा और सातवीं कक्षा की इशिका ने प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता में तृतीय स्थान प्राप्त किया। आठवीं कक्षा की सुनयना ने स्कैचिंग प्रतियोगिता में तृतीय स्थान प्राप्त किया। आठवीं कक्षा की देवश्री ने मानो एक्टिंग में प्रथम स्थान प्राप्त किया। सातवीं कक्षा की इशिका ने फैंसी ड्रैस में प्रथम स्थान प्राप्त किया। इतना ही नहीं देवश्री ने राज्य स्तरीय प्रतियोगिता में भी तृतीय स्थान प्राप्त किया। उसे हरयाणा के राज्यपाल द्वारा पुरस्कृत किया गया जो कि आर्य बाल भारती पब्लिक स्कूल के लिए बहुत बड़ी उपलब्धि है।

सूचना

सभी आर्यसमाजों को, आर्य शिक्षण संस्थाओं को सूचित किया जाता है कि अपने सभी प्रकार के प्रचार कार्यक्रमों का विवरण 'आर्य प्रतिनिधि' साप्ताहिक पत्र में छापने के लिए भेजें। साथ ही विद्वानों, लेखकों, बुद्धिजीवियों से आग्रह है कि वे अपने लेख, कविता आदि निम्न ई-मेल अथवा पते पर भेजें।

सम्पादक 'आर्य प्रतिनिधि' साप्ताहिक
सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक-124001
E-mail : aryapsharyana@yahoo.in

मै० कुलवन्त पिक्कल स्टोर, शाप नं० 115, मार्किट नं० 1, एन.आई.टी., फरीदाबाद-121001 (हरि०)
मै० मेवाराम हंसराज, किराना मर्चेन्ट, रेलवे रोड, रिवाड़ी-123401 (हरि०)
मै० मोहनसिंह अवतारसिंह, पुरानी मण्डी, करनाल-132001 (हरि०)
मै० ओम्प्रकाश सुरिन्द्र कुमार, गुड़ मण्डी, पानीपत-132103 (हरि०)
मै० परमानन्द साईं दित्तामल, रेलवे रोड, रोहतक-124001 (हरि०)
मै० राजाराम रिक्खीराम, पुरानी अनाज मण्डी, कैथल-132027 (हरि०)

www.thearyasamaj.org

प्रथम वार्षिकोत्सव सम्पन्न

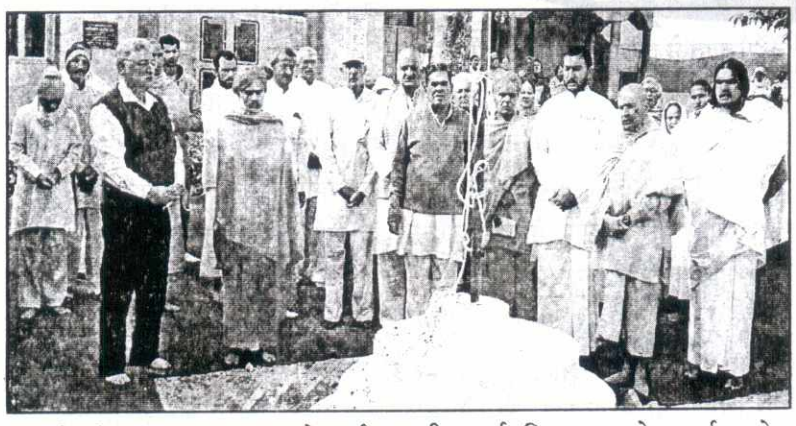

दिनांक 10.11.2016 को दर्शन योग महाविद्यालय महात्मा प्रभु आश्रित कुटिया सुन्दरपुर रोहतक का प्रथम वार्षिक उत्सव बड़े ही शान्ति एवं उल्लासमय वातावरण में सम्पन्न हुआ।

विद्यालय के निदेशक स्वामी विवेकानन्द जी परिव्राजक, आचार्य स्वामी ब्रह्मविदानन्द जी सरस्वती, स्वामी आशुतोष जी, स्वामी ध्रुवदेव जी एवं आचार्य नवानन्द जी के साथ मंच पर अन्य गणमान्य महानुभाव विराजमान रहे जिसमें आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के मंत्री मा० रामपाल आर्य, गोरक्षा दल हरियाणा के अध्यक्ष आचार्य योगेन्द्र जी तथा वैदिक भक्ति साधन आश्रम के मंत्री श्री वेदप्रकाश जी आर्य विद्यमान रहे। दर्शन योग महाविद्यालय के व्यवस्थापक वानप्रस्थी श्री निगम मुनि जी ने मञ्च का संचालन सुचारु रूप से संपादित किया।

विद्वानों ने जीवन में सच्चाई, ईमानदारी, अहिंसादि गुणों को धारण, परिवारजनों को धार्मिक बनाने के साथ-साथ ऐहिक और पारमार्थिक जीवन को किस प्रकार जिया जाये आदि विषयों पर अपने-अपने उद्बोधन दिये। उत्सव में लगभग 200 श्रद्धालु उपस्थित रहे।

—आचार्य नवानन्द आर्य, दर्शन योग महाविद्यालय महात्मा प्रभु आश्रित कुटिया सुन्दरपुर रोहतक

प्रशिक्षण शिविर सम्पन्न

पानीपत। स्थानीय बी.डी. मॉडर्न पब्लिक स्कूल में 10 से 15 नवम्बर 2016 तक चल रहे आर्य वीर प्रशिक्षण शिविर का समापन हुआ। यह शिविर आर्य बाल भारती पब्लिक स्कूल पानीपत के तत्त्वावधान में सार्वदेशिक आर्य वीर दल की ओर से लगाया गया। इस शिविर में स्कूल के लगभग 100 लड़के-लड़कियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया। बच्चों को सर्वांगसुन्दर व्यायाम, सूर्य नमस्कार, भूमि नमस्कार का प्रशिक्षण सार्वदेशिक आर्य वीर दल पानीपत के प्रधान व्यायाम शिक्षक श्री महावीर आर्य ने दिया। प्रशिक्षण के दौरान विद्यार्थियों में बहुत ही उत्साह तथा लग्न दिखाई दिया। अन्तिम दिन विद्यालय के निदेशक आचार्य अभय आर्य ने बच्चों को आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द के जीवन पर प्रकाश डाला। उन्होंने आचार्य चाणक्य का भी वर्णन किया। सार्वदेशिक आर्य वीर दल हरियाणा के प्रान्तीय बौद्धिकाध्यक्ष आचार्य राजकुमार शर्मा ने लाल बहादुर शास्त्री जी के जीवन पर प्रकाश डाला। बी.डी. मॉडर्न स्कूल के प्रधानाचार्य श्री रमेशचन्द्र जी ने आए हुए अतिथियों का गर्मजोशी से स्वागत व धन्यवाद किया। अपने सम्बोधन में उन्होंने भविष्य में ऐसे शिविरों का आयोजन करने का आश्वासन दिया। इस अवसर पर डीपीई श्री जगदीश चहल, पीटीआई श्री संदीप आर्य व स्कूल के सभी शिक्षक उपस्थित रहे।

—महावीर आर्य, व्यायाम शिक्षक

क्या हमारे लिए दूसरा व्यक्ति.... पृष्ठ 2 का शेष....

रहा है?' शीर्षक में वानप्रस्थ साधक आश्रम में प्रचलित '12 घण्टे अग्निहोत्र' की निन्दा की है। उसका समाधान-दोष न होने पर भी गुण में दोषारोपण=परनिन्दा को आत्माश्लाघा मानने वाले लेखक लिखते हैं, कर्म का फल कर्त्ता को ही मिलेगा। जो एक छोटा बालक भी समझ सकता है। आहुति डालना एक कर्म है और घी, सामग्री, धन उसके लिए लगाना या दान देना दूसरा कर्म है। दोनों कर्मों का फल अलग-अलग है, अलग-अलग कर्त्ता को मिलेगा। इसमें क्या दोष है? दूसरों का दान लेकर अग्निहोत्र करने से 'कर्म का फल कर्ता को ही मिलेगा' यह मूलभूत सिद्धान्त कैसे खण्डित होता है? वस्तुत: बुद्धि की न्यूनता है या अपवित्रता है?

आत्मशुद्धि, कल्याण, निर्माण के लिए संध्या, जप, तप, स्वाध्याय स्वयं को ही करना पड़ेगा। हवन आदि शेष चार महायज्ञ स्वयं कर सकें तो अच्छा है, नहीं तो दूसरों से कराया जा सकता है। इसको हमने प्रत्यक्ष-अनुमान-शब्द प्रमाणों से सिद्ध किया है। लेखक ने केवल कथन किया हवन स्वयं को करना पड़ेगा दूसरा नहीं कर सकता इसमें एक भी प्रमाण नहीं दिया। न्यायदर्शन नहीं पढ़े तो कोई बात नहीं सत्यार्थप्रकाश भी गहराई से पढ़ते तो ज्ञान होता 'लक्षणप्रमाणाभ्यां वस्तुसिद्धि:' अनर्गल कथन सत्य नहीं होता है।

क्या किसी ने यह कहा या लिखा है कि 'हवन के लिए दान भेजने से पाप क्षमा होगा?' जब नहीं तो अपनी ईर्ष्या-ज्वलन से निराधार कल्पना करके दूसरे के ऊपर दोषारोपण क्यों करते हो?' आपको इस कार्य का दण्ड मिलेगा' यह अपने आपको समझाइए, योगियों को समझाने की आवश्यकता नहीं है। आप अपना ही सुधार कर ले उससे आर्यसमाज की छाती में जो छुरी का घात करते हैं, उस पाप से बच जायेंगे लोगों को भी शान्ति मिलेगी। जो दूसरों की ओर एक-उंगली निर्देश करता है, उसकी तीन अंगुली अपनी ओर होती हैं। जो व्यापक रूप में अग्निहोत्र करते हैं, वे आत्मघाती हैं ऐसा कोई नहीं मानता है, लेकिन आप अपने लेख से अपने को आत्मघाती सुतरां सिद्ध करते हैं।

आपने लिखा पं० गंगाप्रसाद उपाध्याय जी ने लिखा है, पंच महायज्ञों को करना प्रत्येक व्यक्ति के लिए अनिवार्य कर्त्तव्य है। यह तो सभी जानते हैं, हम भी मानते हैं। इसलिए तो कहते हैं सब पंच महायज्ञ स्वयं करो नहीं कर पाते तो कम से कम ब्रह्मयज्ञ स्वयं अवश्य करो शेष चार यज्ञ दूसरों से करवाओ जब स्वयं के लिए अनुकूलता नहीं। अनुकूल होते ही स्वयं करना प्रारम्भ करो। आप इसके विपरीत दूसरों को नास्तिक बना रहे हैं। वह स्वयं तो कर नहीं सकता दूसरों से करवाने में आप रोक रहे हैं, वह नास्तिक बनेगा और क्या? दूसरों से करवाता रहेगा तो भावना बनी रहेगी, मरेगी नहीं।

इसलिए सभी सज्जन पाठकों से निवेदन है कभी भी ऐसे अविद्वान् के कुत्सित लेखों से भ्रमित न होवें। हर विषय को शास्त्र की कसौटी से देखें, परखें। जो स्वयं इतना समर्थ नहीं है किसी शास्त्रीय विद्वान् से शंका पूछे जो शिक्षा-व्याकरण-निरुक्त-दर्शन-उपनिषद् आदि वैदिक ग्रन्थों का किसी गुरुमुख से अध्ययन किया हो। जो ऋषिकृत ग्रन्थों का अध्ययन गम्भीरता से नहीं करते हैं वैदिक धर्म के प्रति अच्छी भावना रखते हुए भी सिद्धान्त विरुद्ध लिख देते व बोल देते हैं। हमारे कथन में कोई दोष है, शास्त्रविरुद्ध बात है तो नि:संकोच बताएँ। हम सत्य को ग्रहण करने में असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत हैं। शास्त्र प्रमाण है, व्यक्ति नहीं। इस बात को पतञ्जलि महाभाष्यकार कहते हैं—

शब्द-प्रमाणका वयम्। यच्छब्दआह तदस्माकं प्रमाणम्।

एक ग्रन्थ/शास्त्र पढ़कर कोई विद्वान् नहीं बन जाता है। निर्भ्रान्त ज्ञान के लिए अनेक शास्त्रों का गहन अध्ययन आवश्यक है। आयुर्वेदकार लिखते हैं—

एकं शास्त्रमधीयानो न विद्याच्छास्त्र-निश्चय:। तस्माद् बहुश्रुतं शास्त्रं विजानीयात् चिकित्सक:॥ (सुश्रुत: सूत्रस्थानम्)।

धर्मशास्त्र स्मृति-ग्रन्थ से लेकर उपनिषद् तक इष्ट-आपूर्त की चर्चा करते हैं। इष्ट कर्म वे होते हैं जो अपनी कामनाओं की पूर्ति केलिए किये जाते हैं और आपूर्त जो दूसरों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए होते हैं। आपूर्त जैसे कुआं खुदवाना, प्याऊ चलवाना, धर्मशाला बनवाना आदि हैं। साधारण जनता को भी यह ज्ञात है कि इन कार्यों को मजदूर करते हैं परन्तु पुण्य का ागी तो जो अपना धन लगता है वही है। आश्चर्य है विद्वान् होकर कैसे इस बात को समझ नहीं पाते हैं।

संपर्क-व्यवस्थापक, वानप्रस्थ साधक आश्रम, रोजड़ (गुजरात)

www.thearyasamaj.org

भारतीय नारी

भारतीय स्वतंत्रता के पश्चात् देश में भारतीय जीवन मूल्यों के प्रति उदार भावना श्रद्धा उच्च मानसिकता की बजाय पाश्चात्यकरण को तीव्र गति से बढ़ावा मिला है।

स्वतंत्रता समानता के अधिकारों की मांग के साथ स्वच्छन्दता तथा उद्दण्डता भी पनप रही है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता के सम्मुख सामूहिकता या राष्ट्रहित को गौण किया जा रहा है। पारिवारिक चिन्तन के स्थान पर व्यक्तिगत सुखों का महत्त्व दिया जा रहा है। विवाह एक संस्कार न रहकर बाजारू क्रय-विक्रय की वस्तु बनता जा रहा है। आधुनिक नारीवादी यह महिलाओं के गृहकार्य को उचित नहीं मानते, वे रसोई को स्वास्थ्य स्थली तथा स्वस्थ औषधियों की प्रयोगशाला भी नहीं मानते और महिलाओं के निजी व्यक्तिगत जीवन में लिंग भेद के आधार पर पूर्ण समानता की मांग करते दिखते हैं। इसके विपरीत यूरोप तथा अमेरिका में भारतीय जीवन में परम्परागत रूप से परिवार को संस्कार की प्रभावी स्थली माना गया है। फ्रांस के राजदूत ने कठिन परिस्थिति में भारत के जीवित रहने का मुख्य कारण मजबूत पारिवारिक व्यवस्था बतलाया है। अमेरिका के अनेक स्त्री-पुरुष वहाँ बसे भारतीयों के पारिवारिक जीवन के स्थायित्व और उनके बच्चों में उपजे संस्कारों को देखकर आज आश्चर्य चकित है। भारतीय चिन्तन में परिवार निस्तरता तथा स्थायित्व का आधार है। प्राय: गोष्ठियों में नारी शक्तिकरण की गोष्ठियों में नारी के आर्थिक अधिकारों तथा पुरुषों के प्रति पूर्णत: समानता तथा उन स्थानों पर भी उकसाया जा रहा है जहाँ वे जीवविधा, शारीरिक बनावट तथा मनोवैज्ञानिक दृष्टि से भी उपयुक्त नहीं है। प्रकृति ने पुरुष-स्त्री में भेद बनाया है जो शाश्वत है। भारतीय चिन्तन में पुरुष तथा स्त्री के विवाह उपरान्त एक आत्मा माना है, परन्तु समान नहीं है। कुछ अन्तरों से ही दोनों में एकतत्त्व का दर्शन होता है। जीवविधा के शास्त्रियों का कहना है कि माँ बच्चे को जन्म देती है, अपना दूध पिलाती है, बच्चों का भरण-पोषण करती है, जबकि पुरुष आजीविका के साधन जुटाता है। माँ का कार्य कोई अन्य नहीं कर सकता। स्त्री स्वभाव से केवल मधुरभाषी तथा घर में सुरक्षित होती है। इससे यह साबित नहीं होता कि वे निम्न (Interior) है।

भारत में नारी के वेदों से वर्तमान अवस्था पर भारतीय चिन्तकों ने गम्भीरता से अध्ययन कर उसे व्यावहारिक रूप देने का प्रयास किया है। माता-पिता बहन तथा पुत्री के रूप में उसका सदैव आदर किया है। वैदिक काल में पुरुष तथा नारी के संबंध में न किसी को पूर्ण स्वतन्त्र और न ही किसी को अलग माना है बल्कि एक-दूसरे का पूरक, दोनों में मिलाकर समाज की छोटी इकाई माना है। दोनों में एकतत्त्व माना गया है, परन्तु प्रकृति के अनुरूप पूर्ण समानता नहीं। विवाह को एक महान् तथा पवित्र संस्कार माना गया है। जिस पर परिवार, समाज, राष्ट्र का ढांचा टिका है। आज पुन: भारतीय समाज वैदिक समाज के अनुकूल भारत के मातृत्व भाव, पत्नी के सखा भाव, बहिनों के प्रति उदात्त आदर तथा पुत्रियों के प्रतिस्नेही व्यवहार का न भूलना है।

आज आवश्यकता है कि भारतीय नारी का विकास हजारों वर्षों के भारतीय जीवन मूल्यों के आधार पर हो न कि पाश्चात्य की आँधी में प्रभावित हो।

—डॉ. ममता वधवा, 327 जगत कालोनी, भिवानी-127021 मो० 9255403039

मनुष्य की उन्नति हेतु तीन बातें सदा याद करो

1. जीवन में माता-पिता एवं युवावस्था एक बार मिलती है, दुबारा नहीं।
2. तीन चीजें पर्दे के योग्य हैं—दान, स्त्री, अतिथि।
3. तीन चीजों में मन लगाने से उन्नति होती है—ईश्वर, परिश्रम, सेवा।
4. तीन चीजों से सदा बचना चाहिए—परस्त्री, कुसंगति, निन्दा।
5. तीन चीजों को कभी नहीं भूलना चाहिए—कर्ज, फर्ज, मर्ज।
6. इनका सदा सम्मान करो—माता, पिता, गुरु।
7. इनको सदा वश में रखो—मन, काम, लोभ।
8. तीनों पर दया करो—बालक, भूखा, पागल।
9. तीन चीजें किसी की प्रतीक्षा नहीं करती—समय, मृत्यु, ग्राहक।

10. तीन चीजें दूसरा कोई नहीं चुरा सकता—अक्ल, चरित्र, हुनर।
11. तीन चीजें भाई को भाई का दुश्मन बनाती हैं—जर, जोरू, जमीन।
12. तीन चीजें वास्तविक उद्देश्य में बाधक हैं—बदचलनी, क्रोध, लालच।
13. तीन चीजें निकल जाने पर वापिस नहीं मिलती—कमान से तीर, जुबान से बात, शरीर से प्राण।
14. तीन व्यक्ति समय पर पहचाने जाते हैं—स्त्री, भाई, दोस्त।

अमूल्य मृदुवाणी के सजीव पुष्प प्रसून

1. मनुष्य के प्रसन्न होने के दो ही उपाय हैं—आवश्यकता कम करे, परिस्थितियों से तालमेल बनाये रखे।
2. दूसरों के साथ वह व्यवहार करे, जो तुम्हें अपने लिए पसन्द हो।
3. जीवन में निराशा सबसे बड़ा अभिशाप है।
4. फूलों की सुगन्ध हवा के प्रतिकूल नहीं फैलती, परन्तु सद्गुणों की सुगन्ध दशों दिशाओं में फैलती है।
5. परोपकार से ही जीवन की सार्थकता है।
6. माता, पिता, आचार्य, अतिथि, विद्वान् मनीषी साधु सच्चे देवता हैं।
7. जहाँ क्रोध होता है, वहाँ विवेक नहीं होता, क्रोध से विवेक नष्ट हो जाता है।
8. शालीनता और सभ्यता बिन मोल मिलती है, परन्तु उससे सब कुछ खरीदा जा सकता है।
9. परमपिता परमात्मा जो कुछ करता है अच्छा ही करता है।
10. समय को पहचानने वाला व्यक्ति ही सदा सफलता को प्राप्त करता है।
11. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करने में सदैव प्रयत्नशील रहो।
12. सदैव सत्य को जानूं, सत्य को मानूं, सत्य व्यवहार करूँ, सत्य के ग्रहण करने असत्य के परित्याग में सदा उद्यत रहना चाहिए। मानव मात्र का कल्याण करना प्रत्येक प्राणी का परम कर्त्तव्य है। लालच विनाश का मुख्य कारण है। प्रत्येक को अपनी ही उन्नति में सन्तुष्ट न रहना चाहिए अपितु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।
13. मनुष्य मीठी वाणी से ही प्रसन्न होते हैं।

भेंटकर्त्ता : भलेराम आर्य, ग्राम सांघी, जिला रोहतक मो० 9416972879

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा में बिक्री हेतु निम्न साहित्य उपलब्ध हैं। कृपया इसका लाभ उठावें।

क्र०	पुस्तक का नाम		मूल्य
1.	प्रो० शेरसिंह : एक प्रेरक व्यक्तित्व	—	20-00
2.	धर्म-प्रवेशिका	—	10-00
3.	धर्म-भूषण	—	20-00
4.	वैदिक सिद्धान्त सार	—	20-00
5.	सत्यार्थप्रकाश	—	40-00
6.	वैदिक उपासना पद्धति	—	8-00
7.	पं० जगदेवसिंह सिद्धान्ती जीवन चरित	—	10-00
8.	ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका	—	100-00
9.	हैदराबाद सत्याग्रह में हरयाणा का योगदान	—	30-00
10.	पं० गुरुदत्त विद्यार्थी जीवन चरित	—	25-00
11.	महर्षि दयानन्द तथा वेदों पर आक्षेपों का उत्तर	—	15-00
12.	आर्यसमाज का कायाकल्प कैसे हो?	—	10-00
13.	पंजाब का हिन्दी रक्षा आन्दोलन	—	100-00
14.	प्राणायाम का महत्त्व	—	15-00
15.	महाराणा प्रताप तथा उनके वंशज	—	10-50
16.	अमर हुतात्मा भगत फूलसिंह जीवनी	—	15-00
17.	अमर शहीद पं० रामप्रसाद 'बिस्मिल' जीवनी	—	30-00
18.	स्वामी श्रद्धानन्द जीवनी (कल्याण मार्ग का पथिक)	—	80-00
19.	सत्यार्थप्रकाश (बड़ी)	—	150-00

आर्य प्रतिनिधि सभा हरयाणा के स्वामित्व में मुद्रक, प्रकाशक व सम्पादक **मा० रामपाल आर्य** ने दुर्गेश्वरी प्रिंटर्स, माता मन्दिर चौक, पाड़ा मोहल्ला, रोहतक से मुद्रित एवं कार्यालय, सिद्धान्ती भवन, दयानन्दमठ, रोहतक-124001 से प्रकाशित। पत्र में प्रकाशित लेखसामग्री से मुद्रक, प्रकाशक, सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।
प्रत्येक विवाद के लिए न्यायक्षेत्र रोहतक न्यायालय होगा। आपत्ति की अवधि प्रकाशन तिथि से एक माह के भीतर ही मानी जाएगी।